ज्ञानपीठ पूजाञ्जलि : एक अध्ययन

श्री लक्ष्मीचन्द्र 'सरोज' जावरा

भारतीय ज्ञानपीठके संस्थापकोंकी यह भावना ज्ञानपीठ-पूजाञ्जलिके माध्यमसे प्रकट हुई कि पूजा-ध्यान स्तोत्र-वाचन, सामायिक, आलोचना पाठ, आरती आदिकी जिस परिपाटीने समाजकी धार्मिक भावनाको जागृत रखा और आध्यात्मिक शान्ति की ओर उन्मुख किया है, वह सुरक्षित रहे, उसका संवर्धन हो।''''ज्ञानपीठ पूजाञ्जलि द्वारा यह प्रयत्न विशेष रूपसे किया गया है कि शुद्धपाठ प्रस्तुत किया जावे और संस्कृत पूजाओंके हिन्दी अनुवाद द्वारा उनकी महत्ताको—उनके भावको बोधगम्य बनाया जावे। सामग्रीका वर्गीकरण दैनिक और नैमित्तिक आवश्यकताओंके आधार पर किया गया है जिसका सम्पादन पंडित फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्रीने उत्तम रीतिसे किया है। पूजाञ्जलि निम्नलिखित सात विभागोंमें विभाजित है—

(१) सामान्य पूजा-पाठ (संस्कृत-हिन्दी), (२) पर्व पूजादि (संस्कृत-हिन्दी), (३) तीर्थंकर पूजा, (४) नैमित्तिक पूजा पाठ, (५) अध्याय पाठ, (६) स्तोत्रादि (संस्कृत हिन्दी) (७) आरती जापादि।

'पूजाञ्जलि'में संग्रहीत संस्कृत पूजाओंका संकलन बाबू छोटेलालजी कलकत्ताने किया और उनका सम्पादन आ० ने० उपाध्येने किया। डॉ० लालबहादुर शास्त्रीने कतिपय संस्कृत पूजाओंका अनुवाद किया था उससे भी यथोचित यथासम्भव सहायता ली गई। शेष सामग्रीका संकलन ज्ञानपीठके कार्यालयमें किया गया। इन पूजाओंका हिन्दी अनुवाद ललित तथा मधुर भाषामें मूलगामी भावानुसार पं० फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्रीने किया। संस्कृत पूजाओंके साथ होनेसे संस्कृत भाषाका, पूजाके भावका महत्त्व सुस्पष्ट हुआ है। प्राचीन जिन-वाणी संग्रहोंमें जहाँ बड़ा टाइप चित्र थे वहाँ कागजी कंजूसीके कारण गद्य-पद्य भेद नहीं था। पूजाञ्जलि इसकी अपवाद है सुन्दर सम्पादन-प्रकाशन है।

आलोचना पाठके रचयिता जौहरी लाल और कल्याण मन्दिर स्तोत्रके रचयिता कुमुदचन्द्र लिखना समुचित लगा। कुछ ग्रन्थोंमें भूधरदास और सिद्धसेन दिवाकर लिखा गया अनुचित ही लगा।

सम्भवतः सर्वप्रथम पूजाञ्जलिमें ही पूजाकी महत्ता, मूलस्रोत और काल दोषज विकृतिका, प्राचीन-अर्वाचीन पूजाका विधिवत् साधार विश्लेषण-विवेचन किया गया। पंडित प्रवर फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीने जो प्रास्ताविक वक्तव्य प्रथम संस्करणमें लिखा था, वह अठारह पृष्ठोंकी परिधिमें पठनीय-मननीय-चिन्तनीय है।

'कृतिकर्म-साधु और गृहस्थ दोनोंके कार्योंमें मुख्य आवश्यक है। यद्यपि साधु सांसारिक प्रयोजनोंसे मुक्त हो जाता है, फिर भी उसका चित्त भूलकर भी लौकिक समृद्धि, यश और अपनी पूजा आदिकी ओर आकृष्ट न हो और गमनागमन, आहार-ग्रहण आदि प्रवृत्ति करते समय लगे हुए दोषोंका परिमार्जन होता रहे, इसलिए साधु कृतिकर्मको स्वीकार करता है। गृहस्थकी जीवनचर्या ही ऐसी होती है कि जिसके कारण उसकी प्रवृत्ति निरन्तर सदोष बनी रहती है, इसलिए उसे भी कृतिकर्म करनेका उपदेश दिया जाता है।

कृतिकर्मके मूलाचारमें चार पर्यायवाची नाम दिए हैं—कृतिकर्म, चितिकर्म, पूजाकर्म और विनयकर्म। इनकी व्याख्या करते हुए भूमिकामें स्पष्ट किया गया है कि जिस अक्षरोच्चार रूप वाचनिक क्रियाके परिणामों-की विशुद्धि रूप मानसिक क्रियाके और नमस्कारादिरूप कायिक क्रियाके करनेसे ज्ञानावरणादि आठ प्रकारके कर्मोंका 'कृत्यते छिद्यते' छेद होता है उसे कृति कर्म कहते हैं। यह पुण्य संचयका कारण है इसलिए इसे चिति-कर्म कहते हैं। इसमें चौबीस तीर्थंकरों और पाँच परमेष्ठी आदिकी पूजा की जाती है, इसलिए इसे पूजा कम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी कहते हैं तथा इसके द्वारा उत्कृष्ट विनय प्रकाशित होती है इसलिये इसे विनय कर्म भी कहते हैं। यहाँ विनयकी "विनीयते निराक्रियते" ऐसी व्युत्पत्ति करके इसका फल कर्मोंकी उदय और उदीरणा आदि करके उनका नाश करना भी बतलाया गया है। तात्पर्य यह है कि कृतिकर्म जहाँ निर्जराका कारण है, वहाँ वह उत्कृष्ट पुण्य संचयमें हेतु है और विनय गुणका मूल है। इसलिए उसे प्रमाद रहित होकर साधुओं और गृहस्थोंको यथा-विधि करना चाहिए।

विचारणीय विषयमें पंडितजीने पूजाके आह्वान-स्थापन-सन्निधिकरणके विषयमें संकेत किया है। जैन परम्परामें स्थापना निक्षेपका बहुत महत्त्व है; इसमें सन्देह नहीं। पंडित प्रवर आशाधरजीने जिनाकारको प्रकट करने वाली मूर्त्तिके न रहनेपर अक्षतादिमें भी स्थापना करनेका विधान किया है, किन्तु जहाँ साक्षात् जिन-प्रतिमा विराजमान है, वहाँ क्या आह्वान आदि क्रियाका किया जाना आवश्यक है? विसर्जन आकर पूजा स्वीकार करने वालेका किया जाता है, किन्तु जैन धर्मके अनुसार (न) कोई आता है और न पूजामें अर्पण किये भागको स्वीकारता है। इस स्थितिमें पूजाके अन्तमें विसर्जन करना क्या आवश्यक है? आपने विसर्जन पाठके आह्वानं··· मन्त्रहीनंसे मिलते-जुलते ब्राह्मणधर्मके श्लोक देकर तुलनात्मक अध्ययनको बल दिया है।

(१) सम्यग्दर्शन बोध—ते मंगलम् [मंगलाष्टक दूसरा श्लोक] निर्दोष सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र यह पवित्र रत्नत्रय है। श्री सम्पन्न मुक्ति नगरके स्वामी भगवान् जिनदेवने इसे अपवर्ग देने वाला कहा है। इस प्रकार जो यह तीन प्रकारका धर्म कहा गया है, वह तथा इसके साथ सूक्ति सुधा, समस्त जिन प्रतिमा और लक्ष्मीका आधारभूत जिनालय मिलकर चार प्रकारका धर्म कहा गया, वह तुम्हारा मंगल करे।

(२) दृष्टं जिनेन्द्र····नूपुरनादरम्यम् [दृष्टाष्टक स्तोत्र ५वाँ श्लोक] आज मैंने जो हिलती हुई सुन्दर मालाओंसे आकुल हुए भ्रमरोंके कारण ललित अलकोंकी शोभाको धारण कर रहा है और जो मधुर शब्द युक्त वाद्य और लयके साथ नृत्य करती हुई वारांगनाओंकी लीलासे हिलते हुए वलय और नूपुरके नादसे रमणीय प्रतीत होता है ऐसे जिनेन्द्र-भवनके दर्शन किए।

(३) श्रीमज्जिनेन्द्र····मयाभ्यधायि [लघु अभिषेक पाठ १ला श्लोक] तीन लोकके ईश स्याद्वाद नीतिके नायक और अनन्त चतुष्टयके धनी श्रीसम्पन्न जिनेन्द्रदेवको नमस्कार करके मैंने मूल संघके अनुसार सम्यग्दृष्टि जीवोंके सुकृतको एक मात्र कारणभूत जिनेन्द्रदेवकी यह पूजा-विधि कही।

(४) उदकचन्दन····जिननाथमहं यजे (नित्यपूजा अर्घ-श्लोक) मैं प्रशस्त मंगलगानके (मंगल जिनेन्द्र स्तवनके) शब्दोंसे गुंजायमान जिनमन्दिरमें जिनेन्द्रदेवका जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल तथा अर्घसे पूजन करता हूँ।

(५) प्रज्ञाप्रधाना····परमर्षयो नः (नित्यपूजा मुनि स्तवन ४ था श्लोक) प्रज्ञाश्रमण, प्रत्येक बुद्ध, अभिन्नदश पूर्वी, चतुर्दश पूर्वी, प्रकृष्टवादी और अष्टांग महानिमित्तके ज्ञाता मुनिवर हमारा कल्याण करें।

(६) देवि श्री श्रुतदेवते····संपूजयामोऽधुना (देवशास्त्र गुरुपूजा ३रा श्लोक) हे देवि! हे श्रुतदेवते! हे भगवति!! तेरे चरण कमलोंमें भौंरेकी तरह मुझे स्नेह है। हे माता, मेरी प्रार्थना है कि तुम सदा मेरे चित्तमें बनी रहो। हे जिनमुखसे उत्पन्न जिनवाणी! तुम मेरी सदा रक्षा करो और मेरी ओर देखकर मुझपर प्रसन्न होओ। अब मैं आपकी पूजा करता हूँ।

(७) बारह विह संजम····ते तरन्ति (देवशास्त्रगुरु पूजाकी जयमाला श्लोक (८वां) जो बारह प्रकारका संयम धारण करते हैं, चारों प्रकारकी विकथाओंका परित्याग करते हैं और जो बाईस परीषहोंको सहन करते हैं, वे मुनि संसार रूपी महासमुद्रको पार करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(८) निज मनोमणि ·· सिद्धमहं परिपूजये (सिद्धपूजा भावाष्टक १ला श्लोक) अपने मन रूपी मणिके पात्रमें भरे हुए समता रस रूपी अनुपम अमृत रसकी धारासे केवलज्ञान रूपी कलासे मनोहर सहज सिद्ध परमात्माकी मैं पूजा करता हूँ।

(९) जिनस्नानं····सन्मार्गप्रभावना (षोडशकारण पूजा श्लोक १७वां) जिनदेवका अभिषेक, श्रुतका व्याख्यान, गीत-वाद्य तथा नृत्य आदि पूजा जहाँ की जाती है वह सन्मार्ग प्रभावना है।

(१०) सच्चेण जि सोहइ·· तियस सेवा वहंति (दशलक्षण पूजा गाथा ४ सत्यधर्म) सत्यसे मनुष्य जन्म शोभा पाता है, सत्यसे ही पुण्य कर्म प्रवृत्त होता है, सत्यसे सब गुणोंका समुदाय महानताको प्राप्त होता है और सत्यके कारण ही देव सेवा-व्रत स्वीकार करते हैं।

अनूदित अंशोंको दृष्टिपथमें रखते हुए कहा जा सकता है कि अनुवाद बहुत अच्छा हुआ। अनावश्यक विस्तार-संक्षेप दोनों ही नहीं हैं। अनुवादकी भाषापर संस्कृतनिष्ठ शैलीका प्रभाव सुस्पष्ट लक्षित होता है। वास्तवमें विद्वान् सम्पादकने ज्ञानपीठ पूजाञ्जलिके प्रणयनमें पर्याप्त परिश्रम किया है। पूजाञ्जलि जैसा प्रयत्न अपनी दिशाका सुदृढ़ सशक्त चरण है और उसकी सफलताका बहुत कुछ श्रेय पंडित फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री-को है। उन्होंने स्वतन्त्र होकर जिन ग्रन्थोंके भाष्य लिखे, उनमें आपकी उच्चकोटिकी विद्वत्ता पग-पग पर लक्षित होती है।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि "ज्ञानपीठ-पूजांजलि"के प्रास्ताविक वक्तव्यमें प्रकाशित पण्डितजीके विचार आज भी प्रेरणादायक, वतमान परिस्थितिमें जैन समाजको जागृत करने वाले, स्फूर्ति प्रदान करने वाले हैं। पण्डितजीने निष्कर्ष रूपमें यह तथ्य उजागर किया है कि वर्तमान पूजा-विधिमें कृति-कर्मका जो आवश्यक अंश छूट गया है, यथास्थान उसे अवश्य ही सम्मिलित कर लेना चाहिए और प्रतिष्ठा-पाठके आधारसे इसमें जिस तत्त्वने प्रवेश कर लिया है, उसका संशोधन कर देना चाहिए। क्योंकि पंचकल्याणक प्रतिष्ठा-विधिमें और देव-पूजामें प्रयोजन आदिकी दृष्टिसे बहुत अन्तर है। प्रतिष्ठा-विधिमें प्रतिमाको प्रतिष्ठित करनेका प्रयोजन है और देव-पूजामें प्रतिमाको साक्षात् जिन मान कर उसकी उपासना करनेका प्रयोजन है। अतः समाजको इसी दृष्टिसे पूजा-पाठ करना चाहिए।

इस प्रकार पूजाञ्जलि कई दृष्टियोंसे उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण है। भविष्यमें भी जैन विद्वान् इस प्रकार-के संकलन तैयार कर जैन पूजाविधिपर अधिक-से-अधिक शोधपूर्ण विचार प्रकाशित कर सकेंगे।

●

वर्ण-जाति और धर्म : एक चिन्तन

डॉ० ज्योतिप्रसाद जैन, लखनऊ

'वर्ण, जाति और धर्म' श्री पं० फूलचन्द्र जी सिद्धान्तशास्त्री प्रणीत एक ऐसी विचारोत्तेजक, पठनीय एवं मननीय कृति है, जिसमें आधुनिक युगकी एक ज्वलन्त समस्याका आगम और युक्तिके आलोकमें विशद विवेचन तथा समाधान प्रस्तुत करनेका उत्तम प्रयास किया गया है। पुस्तक प्रणयनमें मुख्य प्रेरक स्व० साहू शान्तिप्रसाद जैन थे, जो अपने प्रगतिशील विचारों, सुलझी हुई समीचीन दृष्टि, उदाराशय, दानशीलता और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org